International Conference – 2025: Developed India @ 2047

Charting Multidisciplinary and Multi-Institutional Pathways for Inclusive Growth and Global Leadership held on 4th & 5th April, 2025

Organised by: IQAC - Gossner College, Ranchi

छोटानागपुर के जनजातीय समाज में कला और संस्कृति

डॉ० प्रिया कुमारी दुबे

दर्शनशास्त्र विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची।

e-Mail ID: priyadubey36@gmail.com

झारखण्ड का भू–भाग कला और संस्कृतियों का संगम है, जहाँ अनेक वर्ग, जातियाँ, समूह व जनजातियाँ निवास करती हैं। जिनकी अपनी विशेष परम्पराएँ हैं जो उनके वेश–भूषा, रहन–सहन, बोलचाल व स्थानीय वातावरण में परिलक्षित होता है। झारखण्ड के छोटानागपुर भू–भाग में एक ऐसा समाज निवास करता है जो आज भी संस्कृति के आरम्भिक धरातल पर जीवन–यापन करता है, जिन्हें 'आदिवासी' या 'जनजाति' के नाम से सम्बोधित किया जाता है। जनजातीय समाज का जीवन–यापन अत्यंत कठिन होता है। उनका खान–पान, रहन–सहन, जंगली वातावरण तथा प्राकृतिक स्रोतों पर आधारित होता है। इनका जीवन सहजता व सरलतापूर्ण होता है। जनजाति एक संगठित, सुदृढ़ व क्षेत्रीय मानव समूह है, जिसकी अपनी सामान्य भाषा तथा एक विशिष्ट नाम होता है। अतः हम कह सकते हैं कि आदिम समूह का एक संगठन या समुदाय जिसकी जाति का नाम हो तथा सामान्य बोलचाल की भाषा हो तथा एक निश्चित भू–भाग में निवास करने के साथ–साथ किसी सामान्य विशिष्ट संस्कृति का अनुसरण करता हो, जनजाति के अन्तर्गत आता है। जनजाति एक स्थायी क्षेत्रीय समूह है जो एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में परम्परागत रूप में निवास करते हैं। ये संगठित, व्यवस्थित व अधिक सुस्पष्ट

International Conference – 2025: Developed India @ 2047

Charting Multidisciplinary and Multi-Institutional Pathways for Inclusive Growth and Global Leadership held on 4th & 5th April, 2025

Organised by: IQAC - Gossner College, Ranchi

राजनीति संगठनयुक्त होते हैं। अपने समुदायों में विभिन्न अवसरों को मनाते हैं, चाहे वह सुख का क्षण हो या दुःख का। जनजाति काल्पनिक पूर्वजों व कथाओं का सहारा लेते हैं। ये लोग अपने देवी–देवताओं को प्रमुख मानते हैं, किसी धर्म के तथ्यों को नहीं।

प्रकृति के सान्निध्य में रहने वाली आदिवासी जनजाति का जीवन अत्यंत विषम परिस्थितियों तथा आधुनिक संसाधनों की कमी में व्यतीत होता है जो प्रकृति पर निर्भर होता है। इसके बावजूद भी इनका जीवन सरल, सहज एवं साधारण होता है। परिस्थितियों की जटिलता के बाद भी ये समुदाय अपनी विशिष्ट संस्कृति व धरोहरों को जीवित रखता है। जिसके लिए ये लोग प्राकृतिक संसाधनों का अधिकतम प्रयोग करते हैं। जैसे – लकड़ी, बांस, पशु, चर्म, मिट्टी, पत्थर, खनिज पदार्थ, धातु आदि। दैनिक जीवन में प्रयोग होने वाली उपयोगी वस्तुएँ तथा साज–सज्जा हेतु अलंकारिक एवं सौन्दर्यपूर्ण वस्तुओं का सृजन करते हैं। जिनमें इनका कलात्मक एवं सृजनात्मक कौशल शुद्ध रूप से परिलक्षित होता है। इनका सम्पूर्ण जीवन कलात्मक अभिव्यक्ति से भरा हुआ होता है। रहन–सहन, वेश–भूषा, शृंगार, अस्त्र–शस्त्र, पर्व व उत्सव, संस्कार, रीति–रिवाज आदि में इनकी संस्कृति एवं परम्परा का अद्भुत व आकर्षक समन्वय देखने को मिलता है। इनके द्वारा चुने गये रंग–बिरंगे व मनभावन रंग तथा सरल रूपाकृतियाँ सरल होते हुए भी विशिष्टता की अनुभूति प्रदान करती है। इनके द्वारा निर्मित शिल्पाकृतियाँ तथा हस्तशिल्पकारी में धैर्य, परिश्रम, कल्पना व सौन्दर्य स्पष्ट रूप से झलकता है। ये लोग हस्तकलाओं व वस्त्र निर्माण में भी पारंगत होते हैं। दैनिक जीवन में प्रयोग होने वाली वस्तुओं

International Conference – 2025: Developed India @ 2047

Charting Multidisciplinary and Multi-Institutional Pathways for Inclusive Growth and Global Leadership held on 4th & 5th April, 2025

Organised by: IQAC - Gossner College, Ranchi

जैसे डलिया, बर्तन, चटाई, दरी आदि में भी कलात्मक दर्शन दिखायी देता है। साथ ही रंग–बिरंगे वस्त्रों को बुनना तथा सुन्दर व आकर्षक हस्तनिर्मित आभूषण बनाना, जिनमें फूल–पत्ती, पक्षियों के पंख, मनके, सीप, हड्डी एवं धातुओं आदि का समावेश होते है। इन्हें सौन्दर्य बोध का ज्ञान होता है। इन समुदायों में गोदना (अंगलेखन) की परम्परा भी प्रसिद्ध है। ये समूह मिट्टी के सुन्दर बर्तनों, खिलौनों तथा मूर्तियों का निर्माण करने में भी पारंगत होते हैं। हस्तशिल्प, मूर्तिशिल्प, चित्रकारी के साथ–साथ ये समुदाय नृत्य व संगीत के माध्यम से भी अपने हुनर, संस्कृति तथा परम्पराओं का प्रदर्शन सामाजिक गतिविधि के उद्देश्य की पूर्ति के लिए करते हैं।

जनजातीय समूह विकसित नगरीय परिवेश से दूर जंगलों तथा प्राकृतिक वातावरण में निवास करती हैं। इनकी अपनी संस्कृति, नियम तथा व्यवस्थायें होती हैं। इनकी परम्पराओं, धार्मिक संस्कृति व रीति–रिवाजों का मुख्य आधार धार्मिक आस्था, विश्वास तथा उपासना है। ये लोग प्रकृति एवं अपने पूर्वजों को उच्चतर मानते हैं। अपनी अभिव्यक्ति को कलात्मक रूप से प्रस्तुत करते हैं जो विभिन्न माध्यमों द्वारा प्रदर्शित की जाती है, जैसे चित्रकला तथा मूर्तिकला, गीत–संगीत व नृत्य तथा मौखिक साहित्य।

जनजातीय समाज की प्रमुख चित्रकला :

स्थानीय चित्रकारी की तरफ ध्यान दिया जाय तो हम देखते हैं कि कला का एक वृहद् मौलिक स्रोत हमारे झारखण्ड के विभिन्न स्थानों में निहित है। जिन्हें हम जनजातीय कला के नाम से भी जानते हैं। जादो पट

International Conference – 2025: Developed India @ 2047

Charting Multidisciplinary and Multi-Institutional Pathways for Inclusive Growth and Global Leadership held on 4th & 5th April, 2025

Organised by: IQAC - Gossner College, Ranchi

चित्रण जो कि झारखण्ड के संथाली आदिवासी द्वारा बनाई जाती है। ये लोक पटचित्र लपेटे जाने वाले खर्रे के रूप में कथा चित्र होते हैं तथा इन कथाओं को रात्रि में गांव–गांव में जाकर गीत के रूप में वर्णित करते हैं।

जनजातीय समाज उत्सव तथा पर्व हर्षोल्लास के साथ मनाते हैं। इन अवसरों पर ये लोग अपने घर–आंगन में कलात्मक रूप से साज–सज्जा करते हैं। घर की भित्तियों पर सौन्दर्यपूर्ण अलंकारिक अभिव्यक्ति करते हैं। जनजातीय कला का तात्पर्य दृश्य वस्तुओं, उनकी सजावट और नक्काशी से होता है। यह कार्य जनजातीय समूह, स्थानीय देवी–देवताओं, कहानियों और प्रकृति को दिखाने के लिए करते हैं। यहाँ स्थानीय कला भी प्रयोग होता है। यह कला अधिकतर धातु, लकड़ी, कपड़े, चिकनी मिट्टी अथवा बांस द्वारा प्रदर्शित होती है। जनजातीय समुदाय अपने दैनिक उपयोग की वस्तु, धार्मिक तथा सांस्कृतिक समारोह के लिए खुद प्रारूप तैयार करते हैं। जनजातीय कला जनजातीय लोगों के कौशल ऊर्जा को दिखाती है। यह कला भित्ति से प्रारम्भ होकर आधुनिक समय में कागज, कपड़ा तथा अन्य उपयुक्त धरातलों पर किया जाता है। प्रत्येक जनजाति अपने क्षेत्र, परम्परा, अनुष्ठानिक क्रिया व पौराणिक गाथाओं के अनुसार भिन्न–भिन्न चित्रकारी करते हैं। जिससे छोटानागपुर की संस्कृति व परम्परा की समृद्धि का स्वतः ही अनुमान हो जाता है। इनका आवासीय क्षेत्र लिपाई–पुताई तथा अलंकरण युक्त होता है।

जनजातीय समुदाय में सभी जनजातियों के पहनावे में परस्पर भिन्नता पायी जाती है। आदिवासियों में आभूषणों और गोदना गोदवाने के प्रति विशेष लगाव देखने को मिलता है। आदिवासी सोने के गहने नहीं पहनते,

International Conference – 2025: Developed India @ 2047

Charting Multidisciplinary and Multi-Institutional Pathways for Inclusive Growth and Global Leadership held on 4th & 5th April, 2025

Organised by: IQAC - Gossner College, Ranchi

उनके गहने प्रायः चाँदी, गिलट अथवा अन्य मिश्र धातुओं के बने होते हैं। वे लकड़ी, मोती, मूंगे, सींगों, हाथी दांत, घोंघे, कोड़ी आदि से बने गहने भी बड़े शौक से पहनते हैं। गोदना गोदवाना एक ऐसी लोक परम्परा है, जो प्राचीनकाल से चली आ रही है। जनजातियों में स्त्री–पुरूष दोनों अपने शरीर को गोदनों से सजाना अत्यधिक पसंद करते हैं। स्त्रियों के शरीर पर गोदने अधिक बनाए जाते हैं।[1]

जनजातीय संस्कृति गीतों और नृत्यों की संस्कृति है। कोई भी संस्कार, अनुष्ठान, पर्व–त्योहार, मेला आदि गीत–नृत्य के बिना सम्पन्न नहीं होता। इनके नृत्य भी देखने योग्य होते हैं। प्रमुख रूप से तीन प्रकार के नृत्य किये जाते हैं – वीरता के नृत्य, धार्मिक नृत्य एवं सामाजिक नृत्य। प्रस्तुत की दृष्टि से इन नृत्यों के अन्य विभिन्न प्रकार हो सकते हैं। नाचने–गाने के समय विभिन्न वाद्ययंत्र भी बजाये जाते हैं। इनमें प्रमुख हैं – मांदर, नगाड़ा, ढोल, टिमकी, सिंगबाजा, अलगोवा, चिटकोरा, चिकारा, चुटकी और किंदरी इत्यादि। इनके गीतों में लोरियाँ, अर्थहीन तुकांत, कविताएँ, भक्तिपूर्ण गीत, प्रेमगीत, व्यंग्यात्मक पद्य, महाकाव्यात्मक लोकगान प्रचलित है। इनमें सामाजिक गीत, वैवाहिक गीत, नृत्य गीत, शिकार गीत, जादू मंत्र एवं शव यात्रा संबंधी राग पाये जाते हैं।[2]

- **चित्रकला** – सोहराय और कोहबर पेंटिंग ये मुख्य रूप से दीवारों पर बनाई जाती है। सोहराय पेंटिंग में पशु–पक्षियों, फूल–पत्तों और प्राकृतिक दृश्यों का चित्रण होता है, जबकि कोहबर पेंटिंग विवाह के अवसर पर बनाई जाती है।

- **पटकर चित्रकला** – यह संथाल जनजाति की पारंपरिक चित्रकला है, जिसमें धार्मिक और सांस्कृतिक कथाओं को दर्शाया जाता है।
- **मूर्तिकला और काष्ठकला** – लकड़ी, पत्थर और धातु से मूर्तियाँ बनाई जाती है, विशेष रूप से देवी–देवताओं और प्रकृति से जुड़े प्रतीकों की। आदिवासी समाज में धातु से बने बर्तन और हथियार भी कलात्मक रूप से तैयार किये जाते हैं।
- **वस्त्र एवं हस्तशिल्प** – जनजातीय समाज अपने हाथ से बुने हुए वस्त्रों के लिए जाना जाता है। संथाल और मुण्डा समुदाय में 'गमछा' और 'फटका' प्रसिद्ध हैं। मनके, कौड़ी और धातु के आभूषण (हार, कंगन, पायल) बनाने की परंपरा भी काफी पुरानी है।

- **<u>संस्कृति, नृत्य और संगीत</u>** –

क. छऊ नृत्य – यह एक मुखौटा नृत्य है, जो झारखण्ड, ओडिशा और पश्चिम बंगाल में प्रसिद्ध है।

ख. संथाली नृत्य – यह संथाल समुदाय में विशेष अवसरों पर किया जाता है, जिसमें समूह में नाचने की परंपरा होती है।

ग. डोंगरी नृत्य – यह मुण्डा जनजाति का पारंपरिक नृत्य है। लोग संगीत में मांदर, ढोल, नगाड़ा, बांसुरी और करताल जैसे वाद्य यंत्रों का प्रयोग किया जाता है।ककक

- **<u>त्योहार और अनुष्ठान</u>** –

क. सरहुल – यह प्रकृति पूजा का पर्व है, जिसे वसंत ऋतु में मनाया जाता है।

International Conference – 2025: Developed India @ 2047

Charting Multidisciplinary and Multi-Institutional Pathways for Inclusive Growth and Global Leadership held on 4th & 5th April, 2025

Organised by: IQAC - Gossner College, Ranchi

ख. करमा पर्व – करम देवता की पूजा के लिए मनाया जाने वाला प्रमुख पर्व है।

ग. माघ परब – शिकार से जुड़ा एक त्योहार है।

घ. सोहराय – यह फसल कटाई के बाद मनाया जाने वाला पर्व है।

धार्मिक और सामाजिक परंपराएँ :–

ये समुदाय प्रकृति पूजक होते हैं और पेड़, पहाड़, नदी, सूर्य तथा चंद्रमा की पूजा करते हैं। विवाह में "घोटुल" जैसी प्रथाएँ भी मिलती हैं, जो खासकर मुरिया जनजाति में पाई जाती है। इनके पारंपरिक ग्राम–प्रधान 'माझी' या 'पाहन' कहलाते हैं जो धार्मिक और सामाजिक व्यवस्थाएँ संभालते हैं।

जनजातियों का पारम्परिक धर्म लोक विश्वास पर आधारित सांस्कृतिक परम्पराओं को मानते हैं। मूल रूप से ये जनजातियाँ प्रकृति के प्रत्येक तत्व पर्वत, वन, नदी, झरना, पेड़–पौधे, पशु–पक्षियों में परमसत्ता के अदृश्य रूप में विराजमान मानती हैं और प्रकृति की पुजा विशिष्ट अनुष्ठानों द्वारा करती है।

ग्रहों और नक्षत्रों का प्रत्यंकन :

संस्कृति एवं कला के मांगलिक प्रतीकों में सूर्य कल्याणकारी प्रतीक के रूप में प्रतिष्ठित है। सूर्य प्रकृति का आधार एवं जीवनशक्ति का प्रतीक है। आदिकाल से ही सूर्य अपनी अद्भुत चमक व शक्ति से मानवजाति को आकर्षित करता रहा है। प्रकृति की अद्भुत देन है सूर्य। सूर्य पूजा की महत्ता प्रचीनकाल से ही जनजातियों में देखने को मिलती है।[3]

International Conference – 2025: Developed India @ 2047

Charting Multidisciplinary and Multi-Institutional Pathways for Inclusive Growth and Global Leadership held on 4th & 5th April, 2025

Organised by: IQAC - Gossner College, Ranchi

जनजातीय कला और संस्कृति में सूर्य के साथ–साथ चंद्रमा को भी चित्रित किया जाता है। सूर्य जहाँ बाह्य प्रकाश का प्रतीक है, वहीं चन्द्रमा आंतरिक प्रकाश का द्योतक है। यह वनस्पतियों में मिठास भरने वाला है। चन्द्रमा कल्पना शक्ति का प्रतीक है। जनजाति समाज में सूर्य और चन्द्रमा को ईश्वर की दो आँखों के प्रतीक के रूप में भी चित्रित किया जाता है। जनजातीय संस्कृति में प्रकृति के उपादानों का अपना महत्व है। जनजातियों ने घने वनों के मध्य रहते हुए प्रकृति और वनस्पति के अनेक रंग और आकार को देखा और उसके रहस्यमयी तरीके से संचालित होने की प्रक्रिया से अचंभित भी थे। हर क्षण परिवर्तित होते प्रकृति के रूप को दैवीय शक्ति मानकर उनकी आराधना की। प्रकृति से सृष्टि की उत्पत्ति जीवन तथा विकास की निरन्तरता के सूचक है। वन–पर्वत, नदी–नालों एवं हरे–भरे खेतों से प्रकृति के सौन्दर्य को बढ़ाते हैं व जनजातीय समाज की सम्पन्नता, समृद्धता एवं सांस्कृतिक वैभव के द्योतक रहे हैं।

वृक्षों और वनस्पति का मूल्यांकन :

जनजातियों के जीवन में वन–वृक्ष और वनस्पति सर्वत्र व्याप्त है। उनके बिना उनका कोई अनुष्ठान पूर्ण नहीं होता। वृक्षों से भोजन प्राप्त करते है और जड़ी–बुटियों से अपना उपचार करते हैं। बांस से बांसुरी, शहनाई, घुघना तथा अन्य वाद्य यंत्र बनाकर उनसे संगीत का आनन्द लेते हैं। उनके सभी अनुष्ठानों में वृक्ष और वनस्पति ही जनजातीय संस्कृति के मूल स्रोत हैं। उनके सभी देवी–देवता वृक्षों में निवास करते हैं और इसलिए ये जनजातियाँ जिस वृक्ष पर आश्रित हैं, प्राय: उनकी पूजा आस्था और विश्वास के साथ करते

International Conference – 2025: Developed India @ 2047

Charting Multidisciplinary and Multi-Institutional Pathways for Inclusive Growth and Global Leadership held on 4th & 5th April, 2025

Organised by: IQAC - Gossner College, Ranchi

हैं। जनजातीय समुदायों की कला प्रायः उनकी समग्र अर्थव्यवस्था से जुड़ी होती है। वे अर्थोपार्जन के लिए वनोपज–संग्रहण या कृषि करते हैं और अवकाश के समय अपनी पारम्परिक कलाओं का सृजन करते हैं।

पशु एवं पक्षी का अनुरेखन :

जनजातीय कलाकारों के द्वारा बनाये गये चित्र उनके जीवन का हिस्सा हैं। उनके आसपास दिखने वाली चिड़ियाँ, मोर, हिरण, खरगोश, बिल्ली, गाय आदि जनजातियों के लिए सिर्फ पशु–पक्षी ही नहीं है, उनके समाज कृषि और घर से गहरा सम्बन्ध रखते हैं। ये जनजाति पशु–पक्षियों के व्यवहार, रूप, चाल–ढाल से भली–भांति परिचित होते हैं और ये सभी स्मृति का हिस्सा होती हैं। इसलिए जनजाति प्रायः पशु–पक्षियों के चित्र बनाते हैं। पशु–पक्षियों की आकृतियाँ उनकी स्मृति के आधार पर आकार लेती हैं। ये आकार यथार्थ न होकर सरल रेखाओं और रंगों के माध्यम से सृजित करते हैं। चित्रों के सृजन में उनकी अनोखी कल्पनाशीलता के कारण ये जादुई असर डालते हैं। जनजातियों का जीवन कठोर परिश्रम के साथ ही जंगल में हर पल खतरे की आशंका उन्हें सदैव ही अपनी सुरक्षा के लिए चिंतित बनाये रखती है।

जनजातीय महिलाओं द्वारा एक साधक के समान अत्यंत तल्लीनता एवं एकाग्रता के साथ घर की दीवारों, आंगन को अलंकरण द्वारा सजाया जाता है। जनजातीय समाज के प्रत्येक घर कलात्मक और सौन्दर्यबोध से भरा होता है। जनजातियों द्वारा अपनी परम्पराओं, मान्यताओं के अनुसार भित्ति चित्रों का सृजन किया जाता है। पारम्परिक रेखाओं और रंगों द्वारा

International Conference – 2025: Developed India @ 2047

Charting Multidisciplinary and Multi-Institutional Pathways for Inclusive Growth and Global Leadership held on 4th & 5th April, 2025

Organised by: IQAC - Gossner College, Ranchi

फूल–पत्ते, पशु–पक्षियों का अंकन किया जाता है। जनजातीय कलाओं में बनायी जाने वाली आकृतियाँ सरल हृदयस्पर्शी और प्रतीकात्मक होती है। अभिव्यक्ति के विविध आयाम जनजातीय महिलाओं की ऊँगलियों के स्पर्श से जीवंत हो उठते हैं। जहाँ पर भी उपयुक्त जगह मिली, वहीं गाय, बैल, बकरी, मुर्गा–मुर्गी, चिड़िया, आदमी–औरतें आदि चित्रित करते हैं। इनकी बनायी आकृतियों में परिपक्वता है। इनका कला सृजन सहज उमंग और उत्साह से परिपूर्ण है।

परम्परा किसी भी समाज की संस्कृति पर निर्भर है। युगों–युगों से चले आ रहे रीति–रिवाजों को ही परम्परा कहते हैं। कला एवं परम्परा का क्रम अतीत से संबंधित है। प्राचीन मान्यताओं में भी कला परम्पराएं रही हैं। परम्पराओं में कलात्मक आयामों को प्रतीकों के द्वारा स्वरुप दिया जाता है।[4] चित्रांकन की परम्परा जनजाति समुदाय में प्राचीन समय से चली आ रही है। परम्परा का सम्बन्ध संस्कृति के अविच्छिन्न रूप से है। जिस प्रकार शताब्दियों तक निरन्तर विचारों के मंथन से संस्कृति का विकास होता है, उसी भांति परम्परा भी पीढ़ी दर पीढ़ी के अनुभवों का संचित कोष है।[5] जनजातीय समुदाय भी पीढ़ी दर पीढ़ी अपनी परम्पराओं का निर्वहन करते आ रहे हैं। उनके लिए प्रकृति ईश्वर का वरदान है, क्योंकि प्रकृति के जितने ही पास जायें, उसके अनंत रूप जानने को मिलते हैं, प्रकृति के एक–एक रहस्य अत्यंत गहन होते हैं। वृक्ष जितने प्रकार के होते हैं, उतने ही प्रकार के उनके पत्ते, फूल, फल और छाल भी होती है। इसी तरह डालों, डंठलों, टहनियों,

International Conference – 2025: Developed India @ 2047

Charting Multidisciplinary and Multi-Institutional Pathways for Inclusive Growth and Global Leadership held on 4th & 5th April, 2025

Organised by: IQAC - Gossner College, Ranchi

जड़ों, तनों, कांटों आदि रूपों में वृक्षों के अनगिनत आकार और उतनी ही रंगछटाएँ[6] प्रकृति का यह परिवर्तिन अगाध है, अद्भुत है।

न केवल भारतवर्ष की बल्कि एक पूरे विजातीय संस्कृति का आधारभूत मानवतत्व है। प्रकृति के साथ उनका गहरा तादात्म्य है। ऋग्वेद की ऋचाओं में प्रकृति पूजन विषयों ने अखिल ब्रह्माण्ड में छिपे गूढ़ रहस्यों के अन्वेषण को सबसे बड़ी साधना माना है और प्रकृति से जुड़कर ही ब्रह्मतत्व की प्राप्ति हो सकती है। इसी सूत्र के भीतर ही समस्त दार्शनिक संभावना की जन्म की अवधारणा है। अगर देखा जाय तो जनजातीय संस्कृति प्रकृति के अजस्त्र स्रोत से जुड़ी हुई विशुद्ध वनस्पति प्रेम को परिभाषित करती हुई एक ऐसे दार्शनिक निराकरण की ओर ले जाती है, जहाँ सत्यम् शिवम सुन्दरम् का चरमोत्कर्ष मूर्त होता है।

छोटानागपुर के जनजातियाँ अपने सारे भौतिक अभावों के बावजूद कितने सुसभ्य और सुसंस्कृत हैं, इसे जाने–परखे बिना हमारा आगे कुछ कहना उचित नहीं प्रतीत होता है। छोटानागपुर में विद्यमान मुण्डा, उराँव, हो तथा बिरहोर जनजातियों के समग्र जीवनशैली के अनुशीलन का प्रयास किया गया है। ये जनजातियाँ अपने रहन–सहन, खान–पान तथा आचरण में प्रत्येक दृष्टिकोण से अलग तथा विशिष्ट है। इनके दृष्टिकोण को परखने के लिए इन्हें अत्यंत निकट से जानना आवश्यक होता है। इनके स्थापत्यकला हो या कोई भी अन्य कला हो, सब में जनजातियाँ अत्यधिक निपुण है। मिट्टी का घर, पत्तों का छादन लेकिन उस घर को संवारने का सभी का ऐसा तरीका है कि बड़े–बड़े संगमरमर आवासों का सौंदर्य भी फीका पड़ जाएगा और इससे

International Conference – 2025: Developed India @ 2047

Charting Multidisciplinary and Multi-Institutional Pathways for Inclusive Growth and Global Leadership held on 4th & 5th April, 2025

Organised by: IQAC - Gossner College, Ranchi

भी बढ़कर जीवन के प्रत्येक अभाव को हंस कर झेल जाने वाली उनकी दबाव में भले ही कुछ कमी हो गई हो, लेकिन अब भी गांव में रहने वाले जनजाति भाई–बहनों का निश्च्छल स्वभाव एक बहुत बड़ी चारित्रिक विरासत को पहचान देने वाला है।[7]

छोटानागपुर के जनजातियों का मूल आधार प्रकृति है और वैदिक ऋषियों की बौद्धिक क्षमता के समकक्ष कहीं–कहीं पारम्परिक जनजातीय साहित्य में इनके उत्कृष्ट दार्शनिक बोध का परिचय मिलता है। जनजातीय सांस्कृतिक और दार्शनिक जीवन मूल्यों की शाश्वता और इनकी प्रासंगिकता पर विचार करने पर हम पाते हैं कि ये स्वयं अपनी सांस्कृतिक पहचान और कलात्मक उत्थान के लिए हमेशा से प्रयासरत रहे हैं। आज इस क्षेत्र की खनिज सम्पदा यहाँ की नदियाँ, झरने, पर्वत तथा अनेक आध्यात्मिक स्थल राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय आकर्षण का केन्द्र बने हुए हैं। यह पत्र सांस्कृतिक दार्शनिक और आध्यात्मिक उत्पत्तियों पर टिका हुआ है। इनका इतिहास भी अत्यंत रोचक है। द्रविड़ और मुण्डा दो अलग–अलग भाषा बोलने वाले हैं। लेकिन इनकी जननी के विषय में अगर हम प्रागैतिहासिक दृष्टिकोण से बात करें तो पायेंगे कि इनका एक ही मूल निवास स्थान था, जहाँ से कुछ छोटानागपुर के पठार की ओर आ गये।[8]

भारतीय संस्कृति तथा अन्य देशों की संस्कृति लेकिन सब मिलकर मानव संस्कृति बन जाती है। झारखण्ड इस मानव संस्कृति से परे नहीं है। संस्कृति वह है जो सांसारिक और मानसिक विषमताओं के घात–प्रतिघात से रक्षा करती हुई एक ऐसे 'सम' पर चेतना को ठहराती है, जहाँ

International Conference – 2025: Developed India @ 2047

Charting Multidisciplinary and Multi-Institutional Pathways for Inclusive Growth and Global Leadership held on 4th & 5th April, 2025

Organised by: IQAC - Gossner College, Ranchi

विशुद्ध रूप से शुभता का बोध जागृत होता है। भारतीय ज्ञान की परंपरा में परस्पर सहयोग की भावना से ओजस्वी विधा का विकास होता है, यह पारस्परिक भाव ही भारतीय दर्शन का आधारभूत सत्य है। झारखण्ड की संस्कृति और कला प्रकृति की कोख से जन्मी है। छोटानागपुर के जनजातियों का दार्शनिक पक्ष कहीं से भी न्यून नहीं है।

कला के माध्यम से किसी भी संस्कृति के स्वभाव और प्रकृति को जाना जा सकता है। कला एक माध्यम है संस्कृति को पहचानने की और उनके संरक्षण की झारखण्ड के छोटानागपुर के जनजातियों की संस्कृति उनके कला के माध्यम से स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है और सुरक्षित भी है। डिजिटलीकरण के माध्यम से छोटानागपुर के जनजातियों के कला और संस्कृति को मिनटों में पूरी दुनियां में पहुंचाया जा सकता है। डिजिटलीकरण इनकी कला और संस्कृति को संरक्षित करने का भी एक सशक्त माध्यम है।

निष्कर्ष :– छोटानागपुर के जनजातीय समाज की कला और संस्कृति उनके प्राकृतिक परिवेश और पारंपरिक विश्वासों से गहराई से जुड़ी हुई है। उनकी चित्रकला, मूर्तिकला, संगीत, नृत्य और त्योहार न केवल मनोरंजन का साधन है, बल्कि उनकी सामाजिक और धार्मिक पहचान को भी दर्शाते हैं। इनकी सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करना भारतीय लोक संस्कृति के लिए बहुत महत्वपूर्ण है।

छोटानागपुर क्षेत्र (मुख्यतः झारखण्ड, पश्चिम बंगाल, ओडिशा और छत्तीसगढ़ के कुछ हिस्सों) में बसने वाले जनजातीय समाज की कला और

International Conference – 2025: Developed India @ 2047

Charting Multidisciplinary and Multi-Institutional Pathways for Inclusive Growth and Global Leadership held on 4th & 5th April, 2025

Organised by: IQAC - Gossner College, Ranchi

संस्कृति अत्यंत समृद्ध और विशिष्ट है। यहाँ की जनजातियाँ जैसे संथाल, मुण्डा, हो, उरांव, असुर और खड़िया अपनी पारंपरिक कलाओं, नृत्य, संगीत और रीति–रिवाजों के लिए प्रसिद्ध है। जनजातीय समाज में कला और संस्कृति की अपनी विशिष्ट पहचान है। इसके अन्तर्गत जाति समानता, लिंग समानता, सहभागिता, सामूहिकता, भाईचारा एवं सबसे विशिष्ट प्रकृति से निकटस्थ संबंध एवं प्रकृति प्रेम है, जो अन्य सभी संस्कृतियों से जनजातीय संस्कृति को पृथक् करती है। जनजातीय संस्कृति में मनुष्य का जीवन बिल्कुल सादा है। इनका दृष्टिकोण उपयोगवादी है और विचारधारा "जीयो और जीने दो" की है। उपयोगिता के साथ–साथ इनकी कार्य योजना सामूहिक सहयोगिता एवं अनुशासन पर टिकी हुई है। जनजातीय चेतना के अन्तर्भाव में प्रकृति के नियम के अन्तर्गत संग्रह की अपेक्षा, त्याग, प्रतिशोध की अपेक्षा, दया, क्षमा आदि का महत्वपूर्ण स्थान है। जनजातीय कला समस्त कलाओं का मूल है तथा भिन्न–भिन्न कलाओं, परम्पराओं और संस्कृतियों को अपने में समेटे हुए हैं। इन जनजातियों का कला बोध व सौन्दर्यपरकता हमारे देश को अन्तर्राष्ट्रीय ख्यापति प्रदान कर रहा है तथा जनजातीय अंचल का सौन्दर्य विश्व स्तर तक पहुँच चुका है। परन्तु आदिम कलाकारों का जीवन व सुख–सुविधाएँ अब भी अत्यंत सीमित है। शहरीकरण के कारण इनकी मौलिकता का ह्रास हो रहा है। हमारी सांस्कृति सम्पदा को सुरक्षित रखने के लिए उचित कदम उठाने की आवश्यकता है। जनजाति समुदाय ने प्रकृति के रमणीय वातावरण में रहकर उसके रहस्यों को अपने कला संसार का माध्यम बनाया। उनकी भावना, संवेग एवं मनोविचार उसके द्वारा सृजित चित्रों के माध्यम से आत्मसात किये जा सकते हैं। जनजातीय कला मानव जीवन की

International Conference – 2025: Developed India @ 2047

Charting Multidisciplinary and Multi-Institutional Pathways for Inclusive Growth and Global Leadership held on 4th & 5th April, 2025

Organised by: IQAC - Gossner College, Ranchi

आत्मा है। यह धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष देने वाली है। अभय और मंगल की कामना, सुख एवं समृद्धि की संभावनाओं से परिपूर्ण पर्व में सृजित या अंकित चित्र जनजातीय जीवन की आस्था और वैचारिक परम्परा को दर्शाते हैं। वर्तमान में जनजातीय समुदाय ने अपने सृजन में पारम्परिकता के साथ नवीन प्रयोग को महत्व दिया है, जैसे – जूट, बांस से अनेकानेक आकर्षक शोपीस बनाये। साथ ही जनजातीय जीवन के अभिप्राय को ज्यामितिक आकार में चित्रित कर पर्स, समान रखने का स्टैंड, पंखा, लैम्प शेड, फूलदान, फाईलों, बर्तनों, लौह शिल्प, मिट्टी, काष्ठ शिल्प, गोदना आदि में भी नवीन प्रयोग हो रहे हैं। जनजातीय कला को संरक्षण और प्रोत्साहन की आवश्यकता है, जिससे भारत के इन विशिष्ट समुदायों का सम्मान भी बना रहे और आर्थिक, सामाजिक स्थिति में भी सुधार हो। इससे जनजातीय समाज में सहृदयता, सहिष्णुता और सुख–शांति का विस्तार होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. राधेश्याम शर्मा : साहित्य एवं सांस्कृतिक चिंतन, पृष्ठ–96
2. शंभूलाल दोषी, भारतीय समाज : संरचना और परिवर्तन, पृष्ठ–154
3. सिंह, दिलीप, प्राचीन भारतीय कला में प्रकृति पूजा, स्वाति पब्लिकेशन, 34, सेन्ट्रल मार्केट, अशोक विहार, नई दिल्ली, पृष्ठ–16
4. मावडी, एम०एस०, भारतीय कला सौन्दर्य, तक्षशिला प्रकाशन, 98–ए हिन्दी पार्क, दरियागंज, नई दिल्ली, पृष्ठ–76
5. वही, पृष्ठ–76

International Conference – 2025: Developed India @ 2047

Charting Multidisciplinary and Multi-Institutional Pathways for Inclusive Growth and Global Leadership held on 4th & 5th April, 2025

Organised by: IQAC - Gossner College, Ranchi

6. वर्वे, प्रभाकर, कोरा कैनवास, ललितकला अकादमी, रवीन्द्र भवन, फिरोजशाह मार्ग, नई दिल्ली, पृष्ठ–183

7. सहाय राज रतन, आदिम मुण्डा और उनका प्रदेश, क्राउन पब्लिकेशन्स, द्वितीय संस्करण–2021, पृष्ठ–102

8. कात्यायन रश्मि, बनर्जी गणेश – द उराँव ऑफ छोटानागपुर, क्राउन पब्लिकेशन्स, प्रथम संस्करण–2023, पृष्ठ–134